मनुष्य बना

शुभ संकल्प,

प्रेम,

ब्रह्मचर्य पालन,

निष्काम कर्म,

क्षमा,

शरणागति

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय)
अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के
अनुसार आपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ । उत्तर प्रदेश
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर अलीगढ़
५—सम्पादक का नाम		श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता		भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ मार्च, १९८४

सुधा मितल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

R. S.

ओ३म पूर्णमदः पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

❋ मनुष्य बनो ❋

वर्ष ३३	भाद्रपद संवत २०४० वि०	अङ्क ११

—प्रार्थना—

गुरु दरयाब बहा अति निर्मल, गुरु मुख आन नहाना हो ॥टेक॥
जल प्रवाह वचन की धारा, सत संग घाट बिठाना हो ॥गुरु॥
प्रेमी जन नित गोते मारे, मन का मैल छुड़ाना हो ॥ ,,
तीन ताप से तपन बुझाई, शान्त चित्त बन जाना हो ॥ ,,
चंचल से जब होगये निश्चल, सूझा अगम ठिकाना हो ॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु पर बल बल जाना हो ॥

मौज मालिक मौज मालिक मौज मालिक

शुभ समाचार

दयाल मानवता प्रचारक सभा (रजि०) न्यू राजेन्द्र नगर नई दिल्ली की ओर से

"३३ वां वार्षिक दशहरा फकीर मानवता सम्मेलन"

सत्संग से सुख उपजे—सत्संग से दुःख जाये,
कहें कबीर तहाँ जानिये—साध संग जहाँ पाये।

सलवान पब्लिक स्कूल ओल्ड राजेन्द्र नगर नई दिल्ली में दिनाँक ३ व ४ अक्टूबर १९८४ बुद्ध व ब्रहस्पति वार को कर्म योगी श्री जैपाल बजाज जी की अध्यक्षता में होगा।

इस शुभ अवसर पर हजूर हिज होलिनैस शहन्शाह-ए-आलम परम संत पीरेमुर्शा जी महाराज (दिल्ली वाले) अपने ८० साल के जीवन अनुभव तथा तपस्या के आधार पर बड़े सरल रूप से आप को बतायेंगे कि किस प्रकार गृहस्थ में रहते सच्चे मानव बनकर शाँति, प्रेम, आनन्द और निश्चिन्त और मालिक की मौज में रहकर मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। उन के अतिरिक्त संत मानव दयाल जी महाराज, उत्तराधिकारी परम दयाल फकीर साहिब मानबता मन्दिर होशियार पुर (पंजाब), संत दयालानन्द (आनन्द राव) जी महाराज, (आन्ध्र प्रदेश) संत ताराचन्द जो महाराज (हरियाणा), दयाल स्वरूप

आनन्द दयाल नन्द जी महाराज (दिल्ली) आचार्य श्री प्रेमा नन्द जी महाराज (उ०प्र०), आचार्य श्री पी० एन० पंडित जी महाराज (कशमीर) नई दिल्ली से श्री कृष्ण वसीन (कबीर) जी महाराज, श्री महता जी महाराज, ज्ञानी गुरूमख सिंह जी महाराज, डा० जगदीश चन्द्र जी प्रधान आर्य समाज राजेन्द्र नगर व अन्य महा अनुभवी पुरुष अमृत वर्षा करेंगे ।

प्रेमी भाई ठीक समय पर पधार कर इस अनमोल और शुभ अवसर का लाभ उठायें ।

प्रोग्राम

३ अक्टूबर १९८४ बुद्धवार प्रातः ९ से १२ तक—साँय ३ से ५ बजे तक

४ अक्टूबर १९८४ ब्रहस्पति वार ९ से १२ बजे तक ।

नोट :—(१) ३ अक्टूबर प्रातः व सायं और ४ अक्टूबर केवल प्रातः के लिये पहले की भाँति यथा शक्ति लंगर का प्रबंध सभा की ओर से होगा । अपने साथ बिस्तर अवश्य लायें ।

निवेदक व दर्शनाभिलाषी

मोहन लाल नय्यर (सैक्रेटरी) कृष्णलाल अग्रवाल (प्रधान)

दयाल मानवता प्रचारक सभा (रजि०) दुकान नं० १०६ के पीछें शंकर रोड़ मार्किट न्यू राजेन्द्र नगर नई दिल्ली—६०

फोन ५८३२३०

दो शब्द

केवल अपने लिये जीना मानव जीवन का दुरुपयोग है। इस सृष्टी में सफल जीवन उसका है जो दूसरों के काम आ सके। बादल समुद्र से जल ढ़ोकर लाते हैं और प्यासी धरती को परितृप्ती करने में लगे रहते हैं, समुद्र की महानता को सुरक्षित रखने के लिए नदिया उसमें अपनी आत्म सम्पूर्ण करने की परम्परा को तोड़ती नहीं, फूल खिलते हैं दूसरों को हँसाने के लिए, पौधे उगते हैं दूसरों के प्रयोजन को पूर्ण करने के लिए, इसमें उनका क्या स्वार्थ है ? सूर्य चन्द्रमा और नक्षत्र इस धरती पर प्रकाश प्रदान करते हुए भ्रमण करते हैं यही जीवन की उपयोगिता है सृष्टि का प्रत्येक जीवधारी अपनी स्थिति में दूसरों का हित साधन करता है। जब छोटे छोटे जीव–जन्तु तक परोपकार का बृत लेकर जीवन यापन करते है तब क्या मनुष्य जैसे बुद्धिमान और विकसित प्राणी के लिए यह उचित है। कि वह अपने लिए जिए और अपने लिए मर जाये। यदि नहीं तो आइये और संकल्प लीजिए हम अपनी "मनुष्य बनो" पत्रिका का अधिक से अधिक प्रचार कर अपने गुरु महाराज के बचनों से संसार के ज्यादा से ज्यादा जीवों को लाभ पहुंचायें यह तभी संभव है जब आप सभी पत्रिका को आर्थिक संकट से उवार लेंगे। और पत्रिका का मूल्य समय से भेजेंगे अधिक से अधिक ग्राहक बनने में हमारी सहायता करेंगे।

धन्यबाद

गतांक से आगे

॥ सत सनातन धर्म अथवा मानव धर्म ॥

प्रवचन

मैं यह तो नहीं कहता कि तुम मुझे पूजो। मैं तो कहता हूँ बात को समझो। मैं यही नहीं कहता कि तुम मेरे सत्संग में अवश्य आओ। जिसकी गरज हो वह आवे। मुझे तुम्हारी गरज नहीं। मैंने उनकी आज्ञा को सिर माथे चढाया है। मुझे इच्छा नहीं कि दामोदर मेरे पास आये। मैं आप लोगों की परवाह नहीं करता हूं। सच्ची बात कहता हूँ। दिल में दर्द है। जब से मैंने यह घटना (पान में विष देने वाली) सुनी, पहले तो एक दो घटनायें सुनी थीं, मैं आपको सच कहता हूँ वहाँ से यहाँ तक तो आया मगर किसी ख्याल में डूबा हुआ था। शरीर काँपता था। खाना नहीं खाया गया। अफसोस हुआ! क्या हम गुरुओं ने अपने झूँठे मान के लिये, नानक, कबीर, राधा-स्वामी या दूसरे महा पुरुष हुये, उनके नाम को केवल अपनी गुरुयायी के लिये, अपने महन्तपने के लिये, अपनी जायदाद के लिये, अपने मान के लिये, बट्टा नहीं लगाया!

गुरु भाव घट में बसें, अघट सुघट को खान।
जिसे समझ ऐसी नहीं, वह है मूढ़ महान॥
नहिं गुरु रूप पहिचानी॥

क्योंकि स्त्रियों को समझ नहीं होती है, इसलिये मैं स्त्रियों का गुरु स्त्री बना रहा हूं। यह मेरा सन्देश है क्योंकि मैं जानता हूँ कि गुरु तो आइडियल है। अब स्त्रियां है, इनको तो पता नहीं कौन चेला है। यह तो देखा देखी आई, और मत्था टेका। मत्था ही टेकेंगी। बहुत करेंगी पैसे दे आयेगी मगर स्त्री गुरु

होने से कम से कम इनके मत तो नहीं लिये जायेंगे।

एक बार होशियारपुर में भम्बूताड़ गया। वहाँ सत्संग हो रहा था अष्ट पदी पर वहां एक सज्जन बैठा था और एक स्त्री, वह जार जार रोने लगे। मैं भी उनको देखता रहा। जब सत्संग समाप्त हुआ वह सज्जन पास आया। मैंने कहा यार तू बड़ा प्रेमी है कि रोने लग गया है।

कहा—महाराज ! की रोना ! अपने कर्मा नूँ रोना ! की !

मैं किसी गुरु के नाल पाठी हुंदसी (के पास पाठी था), तो तीमियां बेबकूफ, क्योंकि मैं गुरु के पास रहदासी। मैं नूं बी मत्था टेक दिया। तूं नौजवान कुडिया दा सत लिया है।

मैं वह काम दर्द दिल रखकर करता हूं। मूर्ख नहीं हूं। अपनी बहिनों बेटियों और माइयों का मुझे ख्याल है। ऐ बेटियो कभी किसी साधु सन्त के पाँव को मत्था मत टेको। खुदामिया भी चढ़ के आ जाय उसको भी मत्था मत टेको। मेरी स्त्री भी दातादयाल को मत्था नहीं टेकती थी। दूर से नमस्कार कर देती थी।

उस स्त्री को मैंने पूछा तू क्यों रोती है। उसके हाथों पर घाव थे। गर्दन पर घाव थे, ठीक हुए हुए थे जिस तरह से किसी फट मारे हुए हों। चाकू का फट होता है। मैंने पूछा तुझे क्या हुआ ? कहने लगी मुझे मेरा पति चाकू मारता है।

क्यों ?

मैं सत्संग में जाती व्यास।

क्यों जाती थी ?

मुझे बाबा जी बुलाते थे।

मैंने कहा--बाबा जी क्या चिट्ठी लिखते थे? कहा नहीं, मेरे अन्दर प्रगट होते। मेरे सामने आ जाते। मुझे कहते तू सत्संग में आजा। यह जाने नहीं देते। मैं चोरी से जातीं। मुड़ के आती मुझे मारते।

मैंने कहा कि फिर बाबा जी को चिठ्ठी लिखनी थी कि क्या तुम मुझे बुलाते हो?

यह है अज्ञान तुम लोगों का। मेरा रूप तुम्हारे अन्दर में प्रगट हो गया। मैं आ गया तो मुझे पूरा समझ लिया। रुपयों के ढेर मेरे आगे कर दिये! यही काल और माया का झगड़ा (मुअम्मा) है, जिससे निकलने को राधास्वामी दयाल आये, नानक आये। हमारे सनातन धर्म के वह ऋषि आये, जिन्होंने इसको छाया पुरुष कहा मगर इससे निकला कौन? इस विचार को दृष्टि में रखकर मेंने बोला यह स्त्रियाँ मूर्ख तो हैं ही, कम से कम मत्था टेकेंगी, पैसा ही लुटायेंगी। सत तो नहीं लुटा जायेगा। इसीलिये मैं इस रहस्य को खोल गया ताकि इस भ्रम में आके कि आज तुम्हारे अन्दर बाबा सावनसिंह आ गया तुम ने उसको गुरु कर लिया। आज तुम्हारे अन्दर बाबा फकीर आ गया तुमने बाबा फकीर को गुरु कर लिया। यह तुम भूल में हो। इसी में लुट गये तुम। मेरी इच्छा है कि जो सत्संग यहाँ दे चला हूं किसी समय तुम लोग (मेरे पास तो इतना धन नहीं) सनातन धर्म के नाम से पुस्तक प्रकाशित कर देना ताकि दुनियां की आँखें खुलें कि सचाई है क्या और तुमको बताई क्या जा रही है।

चेला तो चित में रहे, गुरु चित के आकाश।

अपने में दोनों लखे, वही गुरु का दास ।।
रहे गुरु पद घट ठानी ।।

गुरु का दास कौन है ? वह जो गुरु को हर समय अपने अन्तर समझता है। जो गुरु को होशियारपुर में समझता है वह गुरु का दास नहीं है। जो गुरु को आगरे में समझता है वह गुरु का दास नहीं है।

चेला तो चित में रहे, गुरु चित के आकाश ।
अपने में दोनों लखे, वही गुरु का दास ।।
रहे गुरु पद घट ठानी ।।

यह पवित्र विभूति दातादयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज का शब्द है जिन्होंने हुजूर राय सालिगराम साहब, राधास्वामी मत के चलाने वालों से शिक्षा प्राप्त की थी।

सुरत शिष्य गुरु शब्द है, शब्द गुरु का रूप
शब्द गुरु की परख बिन, डूबे भरम के कूप ।।

बाहर के वचन को जो नहीं समझता, वह अन्तर के शब्द की छान बीन कौन करेगा ! पहिले सत्संग ने बैठकर बाहर के गुरु के बचन को छानो उसको पहचानो, तब अन्दर में चलो।

गुरु ज्ञान का तत्व है, गुरु ज्ञान का सार
गुरु मत गुरु गम जो लखे, फिर नहिं भौ भय भार ।।
कमल जैसी गति आनी ।।

जब ज्ञान हो जाता है, बात समझ में आ जाती है तो दुनियां में ऐसे रहता है जैसे कंवल पानी में रहता है। उसको ज्ञान हो जाता है और वह फंसता नहीं है।

राधास्वामी सतगुरु संत ने कही बात समझाय।

जो नहिं माने वचन को, उरझ उरझ उरझाय ॥
कौन समझे यह बानी ॥

तुम में से कई आदमी धनी होंगे। क्या करोगे पैसे लेजाकर इन मेरे ख्यालों को प्रकाशित कराओ, लोग पढ़ें। हजारों का भ्रम दूर होगा। हजारों की शकायें दूर होंगी। तुम्हारी बहू बेटियाँ व तुम लोग लुटने से बच जाओगे। कितना परोपकार है! इससे बड़ा उपकार सन्त करते हैं जो जीव के भ्रमों और संशयों को दूर करते हैं। गुरु करता क्या है? वह जीव के भ्रमों का नाश करता है। कबीर का शब्द सुनो। यह महा अनुभवी पुरुष हुआ है। मेरे दातादयाल कहा करते थे कि इस जुलाहे ने कोई पासा नहीं छोड़ा। वह शब्द यह है :—

वारी जाऊँ मैं सत गुरु के, मेरा किया भरम सब दूर।
चन्द चढ़ा कुल देखे, मैं देखूँ भ्रम दूर ॥
हुआ प्रकाश आस गई दूजी, उगिया निरमल नूर।
माया मोह तिमिर सब नासा, पाया हाल हजूर ॥
विषय विकार लार है जेता, जार किया सब धूर।
पिया पियाला सुध बुध बिसरी, हो गया चकना चूर ॥
हुआ अमर मरैना कबहूं, पाया जीवन मूर।
बन्धन कटा छूटिया जम से, किया दरस मंजूर ॥
ममता गई भई उर समता, दुख सुख डारा दूर।
समझे बने कहन नहिं आवे भया आनन्द भरपूर ॥
कहैं कबीर सुनों भाई साधो, बजिया निरमल तूर।

अहाहा हा! मैं दातादयाल का धन्यवाद देता हूं, जिन्होंने मुझे गुरु पदवी देकर मेरा भ्रम नाश कर दिया। कैसे केवल आप लोगों के द्वारा जो यह कहते हैं मुझको अपने अन्तर देखते

हैं । तो मैं तो होता नहीं तो मुझे विश्वास हो गया कि मेरे अन्तर रूप रंग या रेखा, चाहे वह दातादयाल का रूप था या कोई और था, वह मेरे अपने ही मन का चमत्कार था । मेरे अपने ही मन का काल और माया था । जब से यह ज्ञान हो गया तो फिर मैं कहाँ रहता हूं । अपने ही रूप में, जो शब्द स्वरूप है । यह ऊँचीं बात है क्योंकि मनुष्य का मन वहाँ तक नहीं पहुंच सकता ।

इस विषय पर कल कहूंगा कि इस मन को तुम कैसे कन्ट्रोल कर सकते हो । सुमिरन, ध्यान, भजन तो मैंने कह दिया मगर सुमिरन करने की विधि है । हर व्यक्ति सुमिरन नहीं कर सकता, क्योंकि जो वातावरण है, उसकी जो प्रकृति है, उसकी जो परिस्थितियाँ है, उसकी जो इच्छायें है, वह उसके मार्ग में रुकावटें होती हैं । इसलिये यह गुरुमत प्रणाली है । गुरु के पास जाकर उसके आदेश को मानो ताकि वह तुम्हारी प्रकृति को, तुम्हारे हालात को अध्ययन (Study) करने बाद जो कहना होगा कहेगा । आज कल तो नाम को (दीक्षा) दे दी जाती है । महाराज ! सौ रुपये का नाम ! ढाई सौ रुपये का नाम ! पाँच सौ रुपये का नाम ! जिस तरह से पूजा होती वैसे ही नाम विकता है । धर्मदास जो (कबीर साहब का) गुरुमुख था तीस साल कबीर के पीछे पड़ा रहा नाम के लिये । तीस साल नाम नहीं दिया । आज कल तो गुरु लोग लाउड स्पीकर पर कहते हैं नाम मिलेगा । आकर ले जाना । नाम न हुआ जेब में पड़ी हुई वस्तु हुई, चाहे जिसको दे दी !

इसलिये मैंने शिक्षा को बदल दिया । दातादयाल (महर्षि-शिव) ने कहा था फकीर ! चोला छोड़ने से पहिले शिक्षा बदल

जाना। हो सकता है मित्रो मैंने जो कुछ कहा वह गलत हो। मुझे कोई दावा नहीं है। रिसर्चर (खोजी हूं)। मेरा जीवन सच्चाई की खोज में बीता हैं। यह शिक्षा उपनिषदों की है। सनातन धर्म की है मगर यह ऊँची शिक्षा है। ज्ञान योग ऊँचा है। जन साधारण इसके अधिकारी नहीं।

तुमको कहता हूं बेटियो सुनो! मैं जो कुछ कहता हूं तुम्हारे और संसार के हित के लिये कहता हूं। कभी कोई महापुरुष बैठा हुआ हो तो उसका सत्संग सुनो मगर किसी आदमी के पांव को मत्था मत टेका करो। तुम गृहस्थी हो। मैं आया मैंने तुमको अपना जानवर बनाया। दूसरा आया उसने अपना जानवर बनाया। क्यों लुटे जाते हो? होश की दवा करो।

नोट :— महात्मा हुकमसिंह ने सवाल किया कि हिन्दुओं में एक नरमेध यज्ञ होता है जिसमें आदमी की बलि दी जाती है। आपने उसका वर्णन नहीं किया।

सुनो संसार वालो! मैं जो नर मेध यज्ञ समझता हूं, वह कहता हूं। हमारा जो 'मैं पना' हैं इसको समाप्त करके बुन्द का समुद्र में मिल जाने या अंश का कुल में मिल जाने का नाम नरमेध यज्ञ हैं। मैं इसकी कोशिश कर रहा हूं। चूँकि मैं इस यज्ञ को अभी तक पूरा नहीं कर सका, इसलिये इसका वर्णन सत्संग में नहीं किया। जिस समय यह पूरा हो जायगा उस समय न मैं रहूंगा न मेरे लिये संसार रहेगा। राधास्वामी मत में इस यज्ञ का नाम हैं :—

सुरत हुई अति कर मगनानी।
पुरुष अनामी जाय समानी॥

पांचवाँ सत्संग

(उज्जैन कुम्भ ९-८-६८)

तप

सोचता हूं बुढापा है । कोई स्वार्थ नहीं । कोई प्रयोजन नहीं । क्यों काम करता हूं ? गुरु ऋण, चुकाना है । मेरे गुरु ने जो डयूटी लगा दी उसे पूरा करना चाहता हूं । इसी तरह मातृ ऋण, पितृऋण, गुणऋण, राजऋण, हैं । ख्याल आया कि इन धर्म सम्प्रदायों में झगड़ा है । क्या कोई उपाय है जो जो हमारा द्वेष, हमारी घृणा, हमारी ईर्ष्या जो भिन्न भिन्न मत वालों में है यह दूर हो जाय ? इसका उपाय सनातन धर्म की शिक्षा है । यह सारा संसार वासना के आधार पर है । वासना ही माया है । जो कुछ किसी को मिलता है वह वासना से ही मिलता है ।

हिन्दू शास्त्रों ने संसार ने प्रवृति मार्ग के लिये, वासना को बढ़ाने के लिये विश्वास, यज्ञ, तप, दान पुण्य रक्खे हुये है । जिस आदमी को कोई काम करना होता है उसके लिये तप करना पड़ता है । यज्ञ के विषय पर तो कल मैंने आपको कहा था । यज्ञों का क्रम ऋषियों ने समय समय के अनुसार बदला । जब जैसी मांग और पूर्ति (Demand and Supply) हुई वैसा वैसा बदलते रहे । ब्राह्मणों को भोजन का रिवाज हुआ । आज ब्राह्मणों को भोजन कराने की हर जगह आवश्यकता होती है । जिस समय ब्राह्मण भोजन का रिवाज था ब्राह्मण लोग अपना

कृत्य कर्म करते थे । यह उदासीनथे । संसार में इनकी बड़ी ऊँची वृति थी । जब ऋषियों ने देखा कि इनके खानपान का कोई प्रबन्ध नहीं है, यह तो साधन में लगे हुये हैं, परोपकार में लगे हुये हैं तो उन्होंने मत में ऐसी बातें सम्मिलित कर दी कि ब्राह्मणों को भोजन कराओ ।

अब आज कल हमारे पंजाब में कोई ब्राह्मण यज्ञ करते हैं तो ब्राह्मण तो अब आप कमाते है, फिर विद्यार्थियों को बुला लाते हैं । इसी प्रकार जब बौद्धो का समय था भिक्षु लोग जंगलों में रहते थे । साधन अभ्यास में लगे रहते थे । उन्होंने भिक्षुओं की सेवा का ध्यान दिलाया । यह हर समय की आवश्यकता के अनुसार होता है ।

इस समय की आवश्यकता क्या है ? सबसे बड़ा यज्ञ इस समय क्या है ? इस समय अन्न की कमी है । इस समय सबसे बड़ा यज्ञ यह है कि जो युवा जोड़े (स्त्री पुरुष) एक दो बच्चे पैदा करने के बाद इस ख्याल से सन्तान पैदा न करें कि हम और सन्तान पैदा करेंगे फिर उनके और सन्तान होगी, फिर उनके और सन्तान होगी तो बहुत अन्न खायेंगे मगर अब अन्न की कमी है । विज्ञानियों ने तो यह कहा है कि कुछ साल के बाद आबादी इतनी हो जायगी कि लाख-लाख प्रयत्न करने पर भी उनके लिये खाद्य पदार्थ पैदा नहीं होंगे, अतः इस समय का महान यज्ञ यह हैं कि एक दो बच्चा पैदा करने के बाद जो स्त्री पुरुष इस ख्याल से और सन्तान पैदा नहीं करेंगे कि उनकी सन्तान होगी, फिर उनकी और सन्तान होगी, बहुत सा अन्न खायँगे और अपने मन पर काबू करके जो सन्तान नहीं पैदा करेंगे, आप स्वयं अनुमान लगाओ कि करोड़ों अश्वमेघ यज्ञों

का फल होगा। हां यह फैमिली प्लानिंग से, लूप लगाने से या नसबन्दी क्रिया न हो, तब यह फल मिलेगा। इस समय का धर्म यह है। यह असली यज्ञ है। तुम (गणेश आदि) जमीदार हो। तुम मुझे अपना गुरु मानते हो, अतः मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं कि तुमको बताऊँ कि तुम कम सन्तान पैदा करो। जमीन तुम्हारी खाली न रहे। यह महा पुण्य हैं। इस समय का जो धर्म है, इस समय का जो यज्ञ है, एक तो यह यज्ञ है। दूसरा वह यज्ञ है कि ऐसे धर्म पन्थ की शिक्षा दो जो एकता पैदा करता हो, जिसमें ईर्ष्या, द्वेष घृणा न आये। मेरे जिम्मे डयूटी हैं। दातादयाल का शब्द है :—

तेरा रूप है अद्भुत अचरज, तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत में आया, परम दयाल सनेही ॥

मेरा नाम गुरु ने परम दयाल रक्खा हुआ है मेरी समझ में नहीं आता कि मैं जगत का कल्याण क्या करूँ! फूँक तो मैं मार नहीं सकता। जो कुछ मेरी समझ में आता है मैं वह कहता रहता हूं। बहुत से बुरा भी मानते हैं। तो मेरे कहने का भाव यह है कि ऋषियों ने, सनातन धर्मियों ने यह यज्ञों की पृथा चलाई हुई थी। हर समय या युग के अनुसार जैसी-जैसी आवश्यकता उनको प्रतीत हुई उसी के अनुसार वह धर्म में परिवर्तन करते गये।

एक धर्म हैं तप का। जप, तप, तीर्थ। तीर्थ क्या हैं? प्राचीन काल में तीर्थ स्थान होते थे। तीर्थ स्थानों पर क्या मिलता था। वहाँ ऋषि लोग आते थे। साधुजन आते थे। वह अपने वचनों द्वारा शान्ति देते थे। कुछ तो वह शारीरिक ठण्डक जल से, वायु मंडल से लेते थे, कुछ वचनों द्वारा मन को

शान्ति मिलती थी।

तप—तप से क्या होता है ? रामायण में लिखा है कि तप से ही ब्रह्मा रचना करता है। तप से ही विष्णु पालन करता है। तप से ही शिव संहार करता है। हर एक काम तप से होता है। तप कहते हैं बहुत सी वस्तुओं का त्याग करके किसी एक वस्तु को ग्रहण करके उसके ऊपर अधिक जोर देना। यह है तप। अब मैं सोचता हूं कि क्या तप से लाभ होता है ? मैं विद्वान नहीं हूं। संस्कृत नहीं जानता। लैक्चर देने का ढ़ंग नहीं ! मैं तो साधारण बातों में अमली भाव प्रकट करता हूं। जिस तरह बात की जाती है इसी तरह बात कहता हूँ। तप से लाभ होता है। मैं जीवन की दो चार घटनायें बताता हूँ।

८—९ वर्ष की घटना है। होशियार पुर में एक सरदार अमरीका रिटर्नड (Returned) थे। उनके सन्तान नहीं थी। वह और उनकी स्त्री मेरे मकान पर मेरे पास आये। मैंने कहा भाई ! तेरी स्त्री के कर्म में बच्चा नहीं हैं। उसने बोला—कोई उपाय है ? मैं चूँकि यह कुंजी जानता हूं, मुझे उस कुंजी का रहस्य ज्ञात है। मैंने कहा इलाज तो हो सकता है, यदि कोई करे।

मैंने पौलिसी से काम लिया ताकि वह तप करे, क्योंकि तप से ही तो हर एक को कुछ मिलता है। किसी और ने तो कुछ देना नहीं। न किसी महात्मा ने देना हैं, न किसी गुरु ने देना है। जो कुछ मिलना है तुम्हारे कर्म से मिलना हैं। कर्म, तप, विश्वास, श्रद्धा, यज्ञ यह सब कर्म कोटि में आते हैं। मैंने कहा प्रशाद देता हूं मगर एक शर्त है कि जब बच्चा पैदा होगा तू मर जायगी। यदि तुझे अपने मरने का अफसोस न हो तो तू

कहदे । वह स्त्री कहती है मुझे कुछ परवाह नहीं पिता जी कि मैं मर जाऊँगी । मेरे बच्चा हो जाय, मेरे कुल का नाम हो जाय । तुम मुझे प्रशाद दे दो । मैंने उसे प्रशाद में आम पड़ा था उठा के दे दिया । उसने मेरे सामने खा लिया, बाद में वह गर्भवती हो गई । छटवाँ महीना उसको लगा तो उसका पति घबराया अब तुम सोचो उस स्त्री ने कितना तप किया । उसने एक वस्तु की इच्छा के लिये जीवन की परवाह नहीं की । इसका नाम है तप । मेरे भाव को समझो । चूँकि उसने अपने जीवन की परवाह नहीं की, उसने बड़ा त्याग किया । शरीर का त्याग किया, जीवन का त्याग किया । उसकी जब ऐसी वृति थी तो उसको पुत्र क्यों न मिलता ! प्रकृति में किसी वस्तु की कमी नहीं है । हमको तप करना, यज्ञ करना श्रद्धा विश्वास रखना नहीं आता । जब कभी फिर उसका पति आया तो वह कहने लगता कि बाबाजी ! यदि बच्चा पैदा हुआ और स्त्री गई फिर बच्चे को कौन सँभालेगा ! मैं तो दुखी हूँ । वह रोने लगा । मैं बड़ा हँसा ! मैंने उससे भी तप कराया । क्या तप कराया ? मैं था पंजाब फ्लोर मिल में मैनेजर । तो मैं कभी राशन गोदाम में जाता, कभी डिपो होल्डर के पास जाता । आटा बेचने के लिये यह काम करता था । मैंने कहा दिन में एक बार मुझे देख आया करो, चाहे मैं कहीं हूं । वह था बसों का मैनेजर । एक बसों की कम्पनी थी, उसमें था । अब वह समय निकलता जहाँ भी होता चार महीने तक मुझे देख जाता । जहां भी होता मेरे दर्शन कर जाता । अब उसका भी जीवित है । ९ वर्ष का है । यह मैं उदाहरण देता हूँ तप का । हर एक बात में कोई निश्चय रखना पड़ता है । यदि निष्काम तप हो तो उसका कहना ही क्या है ! तो तप क्या है ? त्याग करना तप है ।

संसार में किसी को कोई वस्तु मुफ्त नहीं मिलती। लोग मुझे यश देते हैं। मगर मैं कुछ नहीं करता। संसार वालो! चार दिन के जीवन को क्या पाखन्ड जगाऊँ। जो कुछ किसी को मिलता है वह उसके अपने श्रद्धा, विश्वास, तप, यज्ञ और अपने ही भाव का अच्छा फल मिलता है। यह है सच्ची बात इसमें कोई लगाव लपेट नहीं है। मैं चूँकि इस रहस्य को जानता हूं, वह कुंजी है। देख लेता हूँ कि जीव को समझ होती नहीं वह उस पर क्रियान्वित होता (अमल करता) है। उसको लाभ पहुँचता है। बिना तप के किसी को कुछ नहीं मिलता है। आज भी एक आदमी मेरे पास यहाँ आया। रोने लगा। कहा बाबा जी! संतान नहीं है! कहने लगा शरीर भी रोगी रहता है। मैंने कहा उसका इलाज बताये देता हूं। वह बता दिया।

हम आशाओं में ग्रसित हैं। तुम गृहस्थी हो। चूँकि तुमको ज्ञान नहीं है, धक्के खाते हो। हमारी आशायें और तृष्णायें बढ़ी रहती हैं, हम उनको पूरा करने को भूल भ्रम में आकर कभी कहीं जाते हैं कभी कहीं। अब यदि ज्ञान हो जाय, समझ मिल जाय, तो तुम अपने घर बैठे हुये यज्ञ कर सकते हो, तप कर सकते हो, विश्वास कर सकते हो। दुनियाँ में जो कुछ मिलता है विश्वास का फल मिलता है। यह है सनातन धर्म!

आज चौथा दिन है या पांचवां, मैं अपने विषय पर आता हूं। मनुष्य इस दुनियां में रहता है मगर जब तक वह प्रवृति मार्ग में नहीं फँसता, तब तक उसे दुनियाँ का अपना अनुभव नही होता। वह वैराग्य या ज्ञान की ओर नहीं जाता। उदाहरण रूप में मैं हूं। मैंने तो विवाह किया, सन्तान देखी। दुखी

भी हुआ और सुखी भी हुआ। अब यदि मैं किसी युवक को यह कहूँ कि विवाह मत करना, इसमें कुछ नहीं, यह दुख का कारण है। क्या वह मेरी बात मानेगा। इसलिये गुरु वह है जो जीव के कर्म को काटता है। गुरु जीव के कर्म काट देता है। वह कैसे ? उसको जीवन के तजुर्बे से गुजार देता है। जो महापुरुष होते हैं ऊँचीं कोटि के, वह हर एक श्यक्ति को एक ही राय नहीं देते। हर एक की प्रकृति अलग अलग हैं, भिन्न-भिन्न हैं। वह जीवों को उसी के कर्म के अनुसार लगाकर उससे काम लेते हैं। देखो ! श्री रामचन्द्र जी थे। अल्पायु में उनको वैराग्य हो गया। योग वशिष्ठ पढ़ देखो। जब वह अपने गुरु वशिष्ठ के पास जाते हैं तो उन्होंने उनको त्याग नहीं बताया। वैरागी या साधु नहीं बनने दिया। उनको ऐसी युक्ति बताई कि जिससे संसार का वह काम कर गये जो जब तक भारत वर्ष है तब तक राम का नाम स्थित रहेगा। मैं गृहस्थियों को कहता हूं, साधुओं को नहीं। वह मुझसे अधिक पूज्य हैं, ऊँचे है। इनका मार्ग और है। हम गृहस्थियों को राम का मार्ग है, कृष्ण का मार्ग है मेरी बात समझो। जब हम दुनियाँ में आते हैं, तो देखते हैं कि यह आशावादी संसार है। मैं तुमको वही शिक्षा दे रहा हूँ जो हमारे ऋषि हमको दे गये, जो शिक्षा वशिष्ठ हमको दे गये। मैं कहता हूं कि तुम लोग गलत वैराग्य में आकर लंगोटी मत बाँधो। वासना के रूप को समझो। वासना नाम है माया का। यह संसार माया है, माया का रूप है। यदि गुरु मिल जाय तो तुम अपनी वासना को काबू में रख-कर इस संसार में रहते हुये जीवन मुक्त अवस्था को प्राप्त कर सकते हो। इस दुनियां में भी सुखी रह सकते हो। इसलिये मैं गुरु मत को मानने वाला हूं।

गुरु जो कहें सो हित कर मानें ।
गुरु जो कहें सो चित धर ध्यान ॥

गुरु तुम्हारा कौन है ? वासना है । सनातन धर्म यही शिक्षा देता है कि वासना को अनुकूल करो । यदि वासना अनुकूल हो तो तुम्हारी यह दुनियाँ भी बन जायगी और इस वासना के सहारे अर्थात माया के सहारे ही तुम मोक्ष प्राप्त कर सकते हो माया ही फँसाती है और शास्त्र कहते हैं माया ही मुक्त करती है । माया नाम है वासना का । शास्त्र कहते हैं वासना रूपी संसार है । यदि मनुष्य गुरु परायण हो जाय तो यही माया हमारे लिये दुनिया भी सुख का कारण हो सकती है और हम सुखी रह सकते हैं और परलोक में भी सुखी रह सकते हैं । तो माया क्या है ? माया है हमारे विचार भाव, आशायें और इच्छायें । फिर क्या करना है ? हर एक आदमी अपनी प्रकृति देखे । हमारे नौजवान बच्चे आते हैं । उनकी प्रकृति का अध्ययन करो । जिस ओर प्रकृति का रुझान हो उस ओर के ख्याल या सँस्कार उनको दो ताकि वह अपने ख्याल का स्वयं अनुभव करें । अनुभव करने के बाद जो गुरु होते हैं समय पर जाकर शिक्षा को बदलते हैं, तुरन्त ही उपदेश नहीं देते । जब तक उसका अपना अनुभव न होगा और अपनी प्रकृति के अनुसार वह फसेगा नहीं, दुनियाँ में उस खेल में खेलेगा नहीं, उससे उसको छुटकारा मिलना कठिन है । मेरे पास एक समस्या आई । युवा लड़का था । दस नम्बर का बदमाश ! दुराचारी, व्यभिचारी, अच्छे घराने का था । अचानक मेरे पास आया । दुखी हो साधुओं के पास जाते हैं । मेरी बात को याद रक्खो । साधु सन्त की बड़ी महिमा है । यदि कोई साधु सन्त की डयूटी

पूरी करे तो। मेरे मकान पर सत्संग हो रहा था। मैं उठा। वह वहाँ सामने बैठा हुआ था। पूछा तुम कौन हो? उसने अपना नाम बताया। क्या चाहते हो? उनकी एक अनुचित इच्छा थी जिस इच्छा के कारण वह बदनाम था मैंने कहा तुम्हारी इच्छा पूरी करुँगा। मैंने उसको यह नहीं कहा कि तेरा आचरण गन्दा है। मैंने उसको धीरे-धीरे चलाया। आज वह काफी जमीन का मालिक है। सब लोग उसका आदर करते हैं। मैं उसके विपरीत नहीं गया किन्तु उनके अनुकूल चला। यह हमारा मन जो है यह बड़ा चंचल है। उसको ठीक करना कोई सुगम काम नहीं है। महा कठिन काम है। इसको वही कर सकता है जिसने माया का रूप जाना हुआ है। माया का रूप वह है जो समझता हैं कि विचार की क्या शक्ति हैं? संकल्प में कितनी शक्ति है!

लोग कहते हैं सन्त अंतरयामी होते हैं। तुम जो साधुओं को अन्तरयामी जिस तरह समझते हो मैं उस तरह नही मानता वह जानते हैं कि इस आदमी के ऐसे विचार हैं। क्यों इसके विचार बने? आगे चलकर उसके इन विचारों का क्या परिणाम निकलेगा। इसको कहते हैं अन्तरयामी पना। तो यह है माया। इस माया का सुधार वही कर सकता है जिसने इस माया को समझा हुआ हो, जो इन विचारों की फिलोस्पी को समझता हो कि माया क्या है और कैसे काम करती है वही इलाज कर सकता है। यही कबीर ने कहा है :—

माया तो ठगनी भई, ठगत फिरे सब देश।
जा ठग ने ठगिनी ठगी, ता ठग को आदेश॥

माया है हमारे संकल्प। मेरी माया और है तुम्हारी माया

और है । कुदरत की माया और है । एक समिष्ठ माया या बड़ी माया और एक व्यष्ठि या छोटी माया । जिस व्यक्ति ने इस माया के रूप को पहिचान लिया कबीर कहता है, मैं उसको नमस्कार करता हूं ।

माया को ठगने वाले कौन हैं ? वह होते हैं साधु और संत । ठगने का अर्थ होता है वश में कर लेना, उसका सब कुछ छीन लेना । ठग कहते हैं सब कुछ छीन लेने वाले को । तो माया के जो संकल्प हैं, हमारे जो विचार हैं इनका प्रभाव होता है, उनको छीन लेने वाला, माया या माया ठगिनी का, ठग हुआ वह कौन है छीनने वाला ? कोई सन्त या साधु, जो इस माया के रूप को भली प्रकार समझता है । मैं पूरी तरह तो नहीं समझ सका मगर थोड़ी बहुत समझ आई है । मैं जानता हूं कि संकल्प की क्या शक्ति है । संकल्प को बदल लेना साधु या संत का काम है । मनुष्य अपने भ्रम या संशय में आया हुआ, एक ख्याल में आया हुआ या फँसा हुआ है रोता है चिल्लाता है । इससे निकल नहीं सकता । सन्त या महात्मा फकीर की महिमा है कि वह भ्रमों से निकालता है । फकीर मुसलमानों का शब्द है । साधु हिन्दुओं का शब्द है । एक ही बात है ।

माया छाया एक सी, बिरला जाने कोय ।
भगता के पीछे लगे, सन्मुख भागे सोय ॥

भगता का अर्थ हो सकता है भागने वाला । जो आदमी संसार के चक्र से बचना चाहता है, यह संसार का खेल अथवा मन का खेल उसके पीछे लगता है अर्थात उसको फँसाने की कोशिश करता है । और जो सामना करता है, उसको वश में कर लेता है, उसका ज्ञान प्राप्त कर लेता है, उसका रूप समझ जाता है ।

तो यह माया, यह विचार जो उसके अन्तर उठते रहते हैं, उसे नहीं सताते । भक्त भी भागने वाला है क्योंकि वह दुनियां की ओर से डर कर किसी दूसरी ओर उससे बचने के लिये जाना चाहता है । यदि ज्ञान नहीं है तो माया उसको भिन्न भिन्न रूपों में उसको फँसा लेता है मैं वाणी की जो व्याख्या करता हूं वह मेरे जीवन के अनुभव के आधार पर है । यह भक्त जन भी माया में हैं । स्वामी जी का कथन है :—

भक्त उपासक योगी ज्ञानी ।
इन सब चक्कर खाया ।।

अब देखो क्या कहते हैं । माया भक्तों के पीछे लगती है यदि कहीं भक्त के सामने आ जाय तो भाग जाती है ।

माया छाया एक सी, बिरला जाने कोय ।
भगता के पीछे लगे, सन्मुख भागे सोय ।।

भक्तों के पीछे माया ऐसे लगी हुई है जैसे मेरे भक्त हैं या जो मुझे गुरु मानते हैं उनके अन्तर जब मेरा रूप प्रगट होता है और वह मेरे रूप को मानते हैं सत्य, मगर वास्तव में (फकीर घन्द) नहीं होता । उनके पीछे माया है और वह जो रूप बनता हैं वह है छाया । माया किसकी थी ? उस भक्त के अपने ख्याल की । तो वह छाया बनी उसके अपने ख्याल ने बनाई । अब यदि उसको यह ज्ञान न दिया जाय तो वह भक्त अज्ञान वश लुट जायगा । रुपया पैसा देगा, मत्थे टेकेगा, नाक रिगड़ेगा आदि । तो इस अज्ञान की भक्ति से उसका धन गया, मान गया और नाक रिगड़ेगा वह अलग । मैं तुमको जो कुछ कहता हूँ वह तुम्हारी समझ में नहीं आता, क्यों मन शुद्ध नहीं है । इसको शुद्ध करने को सत्संग है । शब्द अभी पढ़ा गया, उसमें

लिखा है :—

मैं नहीं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहिं जानूँ ।
मैं फकीर का नाम दीवाना, सबसे बढ़कर मानूँ ॥
जो फकीर मोहि दर्शन देवे, अपना भाग सराहूं ।
अपने तन की चाम की जूती, पग फकीर पहिराऊँ ॥

क्यों ? क्योंकि—

जिस पर साधु की दृष्टि पड़ गई, वह जग योनि न आवे ॥

यह शब्द है दातादयाल का । साधु की दृष्टि क्या होती है ? वह जीव को इस माया का रूप समझा देता है कि तेरे अन्तर यह जितना खेल है तेरे मन का है यह माया है । और जो रूप तेरे अन्तर प्रगट होते हैं यह छाया है । जब उसको यह ज्ञान हो जाता है कि मेरे मन के अन्तर में जो रूप होते हैं यह सब माया है तो इन रूपों को वह सत्य नहीं मानेंगा । जब उसका अन्त समय आयेगा और चूँकि उसे साधु से ज्ञान मिला हुआ है कि यह रूप माया है उनको सत्य न मानेगा । अन्त मता सो गता के अनुसार वह जन्म मरण से बच जायेगा । इसलिये जिस पर साधु की दृष्टि पड़ गई मैं वह दृष्टि करना चाहता हूं । मेरा सत्संग उन जीवों के लिये है जो इस संसार के दुखों से और आवगमन से बचना चाहते हैं । कल मुझे किसी ने कहा कि वह साधु यहाँ खड़े हुये कहते हैं कि बाबा फकीर साधुओं के विरुद्ध बोलता है । हम उसका पण्डाल उखाड़ देंगे । अरे भाई ! उखाड दो ! मुझे मार दो । मैं तैयार बैठा हूं मगर मैं कहता हूं कि तुम अपने जन्म को बनाओ । यह चार दिन का जीवन है । हम अपने पिछले कर्मों के अनुसार अपना कर्म भोगते हैं । यदि हम साधु बने हैं तो अपने कर्मों के अनुसार बने ।

यदि कोई राजा बना तो अपने कर्मों के अनुसार बना। चार दिन के जीवन के लिये हम यदि झूँठे मान आदर के लिये आपस में कलह करते है। इससे क्या लाभ ! हमको जो कुछ मिलता है हमारे कर्म का फल मिलता है। गुरु ज्ञान देता है, भेद बताता है। वह बताता है कि यह ससार माया में फँसा है। कोई समय था जब मैं राधास्वामी मत तथा कबीर की बाणियों को सुना करता था। उनमें लिखा था।

ऋषि मुनि अरु योगी ज्ञानी।
सब पिल रहे इस मन की खानी॥

यह वाणियाँ समझ में नहीं आती थीं। दुखी हुआ करता था। मनुष्य में एक टेक आ जाती है। यह स्वाभाविक गुण है मन का। मन की दो धार हैं। एक मन जो जिस वस्तु को पकड़ता है उसको पकड़ रखता है ! और एक जहाँ से आता है एक उसको पकड़े रखता है और उसमें फँस जाता हैं और दुखी होता है। मैं उन साधुओं के विरुद्ध नहीं हूं। मैं उनका आदर करता हूँ। मेरे मन में किसी के विरुद्ध कोई द्वेष नहीं। न मैं किसी समुदाय का पैरोकार हूं। मैं तो गुरु का पैरोकार हूं। गुरु नाम है ज्ञान का, समझ का, विवेक का। तुम लोग सत्संग में आते हो, मेरी समझ में नहीं आता कि तुमको क्या कहूँ। अनाधिकारियों को सत्संग सुनाना एक मूर्खता है। यह दुनियाँ तो पाखण्ड की जाल है। न मैंने किसी से कुछ लेना है न कोई अपना पन्थ चलाना है। मैं तो जगत कल्याण के लिये आया हूं। जिनको आवश्यकता नहीं है यदि वह सत्संग में आते है तो गलती खाते हैं। डाक्टर के पास वही जाता है जो बीमार है। यदि स्वस्थ मनुष्य डाक्टर के पास जाते हैं तो वह डाक्टर को

पागल कर देंगे । मैं दर्द दिल रखकर आप लोगों को सत्संग कराता हूं । तुम लोगों को सच्ची बात कहता हूं ।

माया छाया एक सी, बिरला जाने कोय ।
भगता के पीछे लगे, सन्मुख भागे सोय ॥
कबीर माया पापिनी, माँगे मिले न हाथ ।
मनहु उतारी झूँठ कर, लागी दौड़े साथ ॥

जब मनुष्य मन के रूप को समझ जाता है तो वह अपने मन के विचारों के चक्र में नहीं आता । यद्यपि जब तक जीवन है मन उसके साथ रहता है । वह जो मन के विचार उठते हैं वह आदमी की सुरत को भरमा नहीं सकते, बहका नहीं सकते, अथवा धोखे में नहीं डाल सकते । यदि मुझे यह ज्ञान न होता कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता, यह सब उनका अपना खेल है, तो पता नहीं कितने जन्म और लेने पड़ते । अब भी क्या पता है मेरे साथ क्या हो । मगर अब मेरी समझ में आ गया कि यह माया तो अपनी बासना है अपना ही संकल्प है । जब तक दुनिया में रहते हो, अपनी वासना को श्रेष्ठ रक्खो । अच्छी वासना रखने में तुम्हारा साँसारिक जीवन स्वयं सुखमय हो जायगा क्योंकि जैसा तुम्हारा ख्याल वैसा हाल, जैसी मति वैसी गति, जैसी करनी वैसी भरनी । तो इस नियम के अनुसार मनुष्य को क्या हो जाता है ? यही कि मनुष्य इस ज्ञान को प्राप्त करके अपने विचारों पर काबू रखता है । यदि दुनियाँ में कुछ चाहते हो—जप करो, तप करो, यज्ञ करो । जैसे मैंने कहा अपनी दुनियाँ बना लो मगर यह समझ लो कि यह वासना है । यह तुम्हारे काम की वस्तु है । माया तुम्हारी दासी है । मन पर सवारी करना, मन का काबू में रखना, मन का वश में न होना, यह है सब माया को काबू में करने का ढंग । अब सवाल

सकते। क्योंकि मेरी रेडियेशन जो ऐसी निकलती है वह प्रभाव करेगी । कामी स्त्री के पास बैठने से काम प्रगट होगा। साधु के पास बैठने से शान्ति मिलेगी। जल के पास बैठने से ठंडक मिलेगी । धूप ने बैठने से गर्मी मिलेगी। इसलिये सत्संग सत का संग, की महिमा है। दातादयाल का शब्द है :—

उप है निकट देश स्थाना, यह उपदेश का सारा।
पंडित कोई भेद न जाने, जाने गुरु मुख प्यारा ॥
जो कोई निकट में जिसके बैठे, उसका रूप संवारे।
उसका रूप बसे नैनन में, अपना रूप बिसारे ॥
संग प्रभाव न कोई बाचे, ऋषि मुनि ज्ञानी ध्यानी।
हमने तो यह समझ विचारा, सतगुरु की सहदानी ॥
भव की संगत करे जो प्राणी, मव भय चित बसावे।
गुरु की संगत में जब आवे, अभय भाव पा जावे ॥
पशु की संगति पशु बन जावे, नर पदवी को खोकर।
भरत हिरन की मोह ममता से पछताया था रोकर ॥

भरत की कथा सुनी होगी। भरत बन में तप करने गया था हिरन के बच्चे के साथ उसका मोह हो गया था। हिरन का का बच्चा भाग गया । उसके साथ उसने मोह किया था। भरत का अन्त समय आया तो फिर दूसरे जन्म मे हिरन बना, अन्त मता सो गता। चूँकि उसको पिछले जन्म का ज्ञान था अत: उसको जन्म मिला। तब उसने अपनी कमाई पूरी की। यह है संग का प्रभाव।

उपदेश कहते हैं संगत को, सोसायटी को। संग दो प्रकार का होता है। जिनके मन चचल होते हैं या जो बुद्धिमान होते हैं उनको वाणी के सत्संग की आवश्यकता है। वचन विलास

यह है कि इस मन को कैसे काबू में किया जाय। यह महा कठिन व्यौहार है। इसके लिये थोड़ा सा इलाज हैं।

पहला इलाज है सत्संग। किसी ऐसे पुरुष का सत्संग करो जो स्वयं मायातीत हो, जिस पर माया प्रभावित नहीं होती हो, जो अपने मन के विचारों में बह नहीं जाता हो, जिसको मन अपने विचारों में घसीट नहीं ले जा सकता हो। ऐसे पुरुष की संगत करो, ऐसे पुरुषों के पास रहो, ऐसे पुरुष के दर्शन करो, ऐसे पुरुष का ध्यान करो। मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं कि क्या तू पुस्तक लिखी बातें कहता है या यों हो कहता है ? इसका उत्तर मिलता है कि मैं पुस्तकों की लिखी बात नहीं कहता। जो आदमी जैसा होता है उसके अन्तर से वैसी ही रेडियेशन निकलती है। यह साइंस ने सिद्ध किया है। १९५० ई० १० दिसम्बर के 'ट्रिब्यून' पत्र में एक लेख निकला था। उसमें यह सिद्ध किया था कि मानव शरीर एक रेडियो स्टेशन है। इसके अन्तर से जिस-जिस प्रकार के विचार निकलते हैं साइंस ज्ञाताओं ने पर्दे (screen) पर फोटो लिये हैं। यह प्रभाव करते है। इसका नाम है सत्संग। इसलिये सनातन धर्म में बार-बार चेतावनी दी जाती हैं। यह सन्तों को महिमा है। मगर तुम सत्संग समझते हो गाने बजाने को मैं इसको सत्संग नहीं समझता, यद्यपि यह सत्संग की शाखा है। कथा वार्ता भो सत्संग की एक शाखा है मगर असली सत्संग है सत संग। सत है कोई वीतराग पुरुष इसको कहते है उपासना। उपासना कहते हैं—उप=निकट, आसन—बैठना। तो सत्संग उसका होना चाहिये जो स्वयं वीत राग पुरुष है। यदि मैं यहाँ इस नीयत से आया हूं कि आप लोगों से धन इकठठा करके ले जाऊँ तो जो व्यक्ति मेरे सम्पर्क आयेंगे वह धन भी देंगे, मगर स्वयं लालच से बरी नहीं रह

करना पड़ता है। जिनका आपस में मेल होता है उनको वचन विलास की आवश्यकता नहीं। संगत में आने पर एक के प्रभाव का नक्शा दूसरे पर पड़ जाना स्वाभाविक है। परसों सुबह मैं यहां बैठा हुआ था तो कुछ आदमी बैठे हुए थे। मैं तो अपनी मस्ती (समाधि) में था। आधा या एक घण्टा रहा। लोग बैठे रहे। जब मेरी आंख खुली तो मैंने पूछा कि भई तुमको मेरे पास से क्या मिला ? कहते हैं हमको शान्ति थी अब मैंने तो उनकी शान्ति को फूँक नहीं मारी। मैं स्वयं उस अवस्था में था। मेरी रेडियेशन स्वयंमेव उन पर पड़ी। मैं जो कुछ तुमको कह रहा हूं मैं तुमको लुटने से बचाना चाहता हूँ। पूछो क्यों ? क्योंकि आजकल के कितने ही महात्मा हैं जो अपने सामने बिठाकर अभ्यास कराते हैं स्त्रियों और पुरुषों को। दुनियाँ यह समझती है कि यह महात्मा जब अभ्यास में बैठते है हमें कुछ देते हैं। वह देते होंगे मैं नहीं जानता। मैं सतपुरुषों के चरणों की धूल अपने सिर पर रखकर उनको नमस्कार करता हूं। मैं अपना अनुभव बताता हूँ। मैं फिरोजपुर में अपर डिवीजन क्लर्क था। बलीराम हकीम के मकान में रहा करता था। एक भोलानाथ सत्संगी था। बाबा जैमलसिंह से नाम (की दीक्षा) लिये हुये था। बाबा सावनसिंह जी का गुरु भाई। यह अभ्यास के लिये रोज प्रयत्न करता मगर बनता कुछ नहीं था। उसकी लड़की चीफ बुकिंग क्लर्क की स्त्री थी। जब मैं अम्बाले गया तो वह लड़की मेरे सत्संग में आई। उसने अपने पिता से कहा कि तुम जो यहाँ फिरते रहते हो, रोज रोते रहते हो, बाबा फकीर के पास चले जाओ। वह मुझसे चार वर्ष बड़ा था। वह फिरोजपुर आ गया। मैं शाम को दफ्तर से आया तो वह मुझसे कहता है कि महाराज ! यह नाम लिया हुआ है मगर बना कुछ नहीं। मैंने कहा भई एक बात कहता हूं। मेरे पास तो

कुछ है नहीं। क्या तुम्हारा ब्रह्मचर्य कायम है ? उसने कहा कि जी, मेरी स्त्री को मरे २० वर्ष हो गये। दस साल तो मैंने बाहर खेह खाई मगर दस वर्ष से बचा हुआ हूं। मैंने कहा अभ्यास में बैठ जाओ। मैं भी बैठ गया। मैं अभ्यास में चला गया। जब घण्टासवा घण्टा के बाद मैं उठा, वह भी उठा तो वह नाचने लगा। बूढ़ा आदमी ! उसने कहा—बाबा जी ! मेरा शब्द भी खुल गया। वलीराम हकीम मेरे गुरु भाई थे। वह मेरे साथ लड़ पड़े। कहने लगे पण्डित जी बुरा न मानना। हम आपकी सेवा करते हैं। रोटी भी खिलाते हैं यद्यपि आप खर्चा देते हैं मगर आपने तो इस पर एक दिन में दया कर दी और हम इतनी मुद्दत से आपके पास बैठते हैं आपने हम पर दया नहीं की।

ऐ संसार के परमार्थी जीवो ! मैं तुम्हारा भाई हूं। मुझे कुष्ट पड़े जो मैं झूँठ बोलूँ। मैं जब अभ्यास में गया मैंने कुछ नहीं किया। न मैंने उसका ध्यान किया। न मेरे चित्त में यह ख्याल आया कि उसको लाभ पहुँच जाय। न मुझे पता था कि मैंने कुछ किया। मैं तो शब्द और प्रकाश में आप समाविष्ठ था। फिर वह किसने किया ?

रेडियेशन के नियम ने। यदि मेरे वश में होता तो मैं किसी को अपने सामने आ के रोने न देता ! यदि मेरे वश में होता तो मेरे पास संसार के दुखी प्राणी आते हैं—कोई अभ्यास के लिये, कोई दुनियां के लिये, तो मैं सच कहता हूं मैं उनको तार जाता। मेरे पास कुछ नहीं। सम्भव है इन महापुरुषों के पास में हो। वह जानते होंगे। मैंने इन महापुरुषों का हाल सुना और देखा है। गुसाईं तुलासी दास जिसने रामायण लिखी, तीन वर्ष इतना कष्ट उठाया जिसका कोई हिसाब नहीं।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने कितना कष्ट उठाया ! बाबा सावनसिंह ने कितना कष्ट उठाया ! और महात्माओं की क्या क्या बात आपको कहूं ! सुनाम स्टेशन पर एक साधु रहते थे। बड़े बड़े आफीसर, सुपरिटेन्डेन्ट जेल, डिप्टी कमिश्नर आदि उनके चेले थे। पिछली आयु में आध धर्लांग दूर पर उस साधु के पेट में दर्द हुआ। वहाँ से लुड़कता-लुड़कता आध फर्लांग से लुड़कता—लुड़कता अपनी कुटिया में गया। २१ दिन रात उसका यह हाल रहा। उसके इतने बड़े-बड़े चेले उसके पूजने व उसका ध्यान करने वाले ! जब मैंने यह दशायें देखीं मेरे पाँव की मिट्टी निकल गई। मैंने अपने को कहा अरे बेबकूफ ! गुरु बन जायगा क्या ले जायगा साथ ! दुनियाँ की शोभा चार दिन की ! तो मेरे मन में एक संशय आ गया है, बुढ़ापा समझ लो, कि इन महापुरुषों को जीवन में इतने कष्ट हुये, शायद इनके अपने ही इस जन्म के कर्म का फल हो। अत: मैंने इस गुरु पदवी पर आने के बाद बड़ी सत्यता से काम लिया हैं। पता नहीं कि मेरे साथ क्या बीते ! इसलिये मैं सच्चाई से काम लेता हूं। देखो ! तुम लोगों ने मेरी कितनी इज्जत की। मैं आया पंडाल लगा दिया, लंगर लगा दिया, मुझे मत्थे टेकते हो। क्या मेरी आत्मा पर कोई बोझ नहीं ? मेरे सिर पर जिम्मेदारी है दुमियां की ! इसलिये मैं सत्यता से काम लेता हूँ। ऐ मानव ! तुमको जो कुछ मिलता है यह तेरे अपने कर्म का फल है। बाहर में जैसे की तू संगत करता है तो जो कुछ उसके अन्तर में है उसका प्रभाव तेरे मन पर पड़ेगा। तुमने मुझे बुलाया। मेरी आत्मा सुखी है कि मेरी आत्मा पर कोई धोखा दही का या झूँठे मान का कोई वोझ नहीं। मैं नहीं

कहता कि तुम मेरी संगत करो किन्तु तुम लोगों से मुझको यह लाभ पहुँचता है कि मैं कोशिश करता रहता हूं कि मेरा मन विचलित न हो यद्यपि मैं गिरता रहता हूं मगर संभलता रहता हूं। मैं जीव हूं। कोई भी महापुरुष जब तक वह देह में है चाहे वह स्वामी जी हों या कबीर हों, सब ही जीव हैं। सबमें कोई न कोई त्रुटि रहती है। राधास्वामी मत को मानता हूँ क्योंकि उसमें मैंने सचाई समझी। स्वामी जी ने स्वयं लिखा है :—

जब सुरत आवे देह में, जीव रूप ले मान।
जब सुरत उलटे गगन में, हंस रूप पहिचान॥

तो जिसकी सुरत इन ९ द्वारों (अर्थात देह) में किसी भी समय आई, वह जीव है। उसमें अच्छाई भी होगी, उसमें बुराई भी होगी। किसी में कम होगी, किसी में थोड़ी अधिक। कोई ज्ञान से जीव काटता है, कोई अज्ञान से। यदि तुम उत्तम पुरुषों की संगत करते रहो जो स्वयं क्रियात्मक (आमिल हैं) और आचार्य बनकर सच्चे हैं, तो लाभ पहुँच जायगा। मैं बता रहा था कि आजकल महात्मा सामने बिठाकर अभ्यास कराते हैं स्त्रियों को और पुरुषों को। देखो बेटियो! मैं तुमको कहता हूं कि कभी किसी महापुरुष के पास जो तुमको कहे कि यहाँ इस कमरे में बैठ जाओ और यहाँ बैठकर अभ्यास करो, तुम मत बैठो। मैं बुराई की बात नहीं करता। कहना नहीं चाहिये मगर तुम्हारे हित के लिये कहता हूँ। मुझे एक घटना मालुम हुई। व्यास वाले 'सारी दुनियाँ' नामी पत्र के एडीटर ने एक स्त्री व पुरुष को चिठ्ठी लिखकर मेरे पास भेजा। मैं अपने मकान पर था। वह आये। चिठ्ठी लाये। पूछा क्यों आये हो? कहा—महाराज! इस स्त्री को भूत प्रेत आते हैं। क्यों? क्या हुआ? मैं आदमी की पहिचान जानता हूं। जब वह आदमी

मेरे पास आया मैंने उसको बड़े ध्यान से देखा। पूछा—क्या समझ के आया है ? कहा—सन्त समझ के। पूछा विवाह कराये कितने वर्ष हुये ? कहा सात वर्ष ! मैंने पूछा क्या नपुंसक है ? उसने स्वीकार किया। मैंने पूछा क्या तुम सत्संगी हो ? कहा—"हां"। मैंने कहा कोई साधु आके तुमको सत्संग कराया करता है ? कहा—हां किसी गददी का साधु है जो सत्संग कराया करता है। स्त्री को मैंने जरा घुड़की देकर पूछा कि तू सच बता कि वह साधु तुमको कानों में उँगलियां डाल के बिठाया करता हैं कि नहीं ? कहां हाँ बिठाया करता है। मैं क्रोध करके बोला कि सच बता उसने तेरा सत लिया या नहीं ? वह कहने लगी—लिया, लिया। मैंने कहा इसको कोई भूत प्रेत नहीं। चूँकि इसको काम के अंग का कोई सुख सात वर्ष से नहीं मिला है, इसलिये इसके मन के विचार हैं जो भूत प्रेत बनाकर इसके पास आते हैं।

इसलिये ऐ धार्मिक जगत के भाई बहिनो ! तुम्हारे हित की बात कहता हूँ। तुम पथभ्रष्ट हो गये हो। ये साधु लोग फिर कहेंगे कि इसका पण्डाल उखाड़ देते हैं। हमला कर देते हैं। कर दो भाई !

इश्क में तेरे कोह गम, सिर पै लिया जो हो सो हो।

मैं तुमको सच्ची मति देना चाहता हूं। अच्छे पुरुषों की संगत करो। यह नहीं कहता न करो। मैं साधु की इज्जत करता हूं मगर कोई साधु हो ! ऐसे साधु न हों जो स्त्रियों को इकठ्ठा करें और उनका सत लेते फिरें। साधु का सम्मान है मगर साधु क्या देता है ? उससे रेडियेशन मिलता है। उसकी पहिचान है कि जिस साधु के पास जाकर उसकी संगत करने से तुमको शान्ति मिलती है, जिसकी बातें सुनकर, जिसकी

सेवा करने से तुमको शान्ति मिलती है तो और अधिक सेवा संगति करो । यदि शान्ति नहीं मिलती सन्तुष्टि नहीं होती तो फिर छोड़ दो ।

झूंठे गुरु की पक्ष को, तजत न कीजे बार।
द्वार न पावे शब्द का, भटके बारम्बार ॥

यह है सबसे बड़ा तरीका उपसना का । किसी महापुरुष की संगत में बैठो । पाँचों उँगलियाँ बराबर नहीं होती । एक मछली सब तालाब को गंदा कर देती है । साधु बड़ा सत्य आत्मा व्यक्ति होता है । संसार में यदि संत न होते तो संसार जल मरता ।

आग लगी आसमान में, झर झर झरे अंगार।
जो न होते सन्त जन, जल मरता संसार ॥

सन्तों के चित्त में द्वेष नहीं होता । वह सबके हितकारी होते हैं । दूसरे के भले के लिये अपना हित देते है । उनका जो हित का वातावरण है अपना रेडियेशन है वह काम करता है । ऐसे महात्मा भी दुनियाँ में हैं जो जंगलों में रहते हैं । उनकी धारें निकल कर संसार को शान्ति देती हैं । यह साधुओं की महिमा है । सन्त की महिमा तो बड़ी भारी है मगर किस साधु और सन्त की ? जो वीतराग पुरुष है, जिसने माया के रूप को समझ लिया है । अतः मन की चंचलता को दूर करने का एक-मात्र इलाज है सत्संग ।

कितने आदमी मेरे पास आते हैं जिनके मन अधिक चंचल है । वह कहते हैं पण्डित जी ! हमारी और स्टेजज (श्रेणियाँ) तो पार हुई नहीं, कोई अन्तर में दर्शन तो किये नहीं मगर हम को इतना लाभ पहुँचा कि जब से आपके पास आये हैं हमारा

मन शान्त है । हमको कोई कष्ट नहीं । अभ्यास के बाद भी शान्ति ही मिलती है । जो अभ्यास में तुम्हारे अन्तर भी लीलायें दिखाई आती हैं यह क्या हैं ? सहसदलकंवल त्रिकुटी, शून्य,महाशून्य,भंवरगुफा,यह सब माया है । सहसदलकंवल में तुम्हारे मन की अनेक प्रकार की जो वृतियाँ उठती रहती हैं उनके रंग रूप हैं । वह तुम्हारे विचार हैं । यह घण्टा अन्तर में बजता है । क्यों बजता है ? जब तुम बहुत सी धातुओं को इकठ्ठी (एक) कर लो और उसके ऊपर हथौड़ा मारो तो घण्टे की आवाज सुनाई देती है । जिसके अन्दर संसार की या स्थूल पदार्थो की इच्छायें रहती हैं तो जब वह अभ्यास करते है उनकी वृतियाँ चूँकि स्थूल इच्छाओ को लिये हुये रहती हैं जब वह स्थान पर इकटठी होतो है तो सुरत उन पर चढ़ती है उस समय घन्टा बजता है । जब संसार की इच्छायें नहीं रहतीं, प्रेम की इच्छायें, ज्ञान प्राप्ति की इच्छायें रहती हैं या धर्म कार्य की इच्छायें रहतीं हैं तो सूक्ष्म हो जाती हैं और जब तुम्-हारा मन अन्तर में एकाग्र होता है, वहीं ओ३म् (ओंम) धुनि, मृदंग की धुनि पैदा करती है । वही जब और अधिक सूक्ष्म हो जाती हैं तुम्हारे अन्तर में रारंग सारंग की धुनी प्रगट होती है । यह तुम्हारा मन या संकल्प एक माद्दा (पदार्थ) है जैसे स्थूल माद्दा मिट्टी, जल है, इस प्रकार तुम्हारे संकल्प में पृथ्वी तत्व, जल तत्व यह सब मौजूद रहते हैं । तुम जब अभ्यास करते हो तो जिस प्रकार की तुम्हारी प्रकृति है इसी प्रकार के शब्द सुनोगे । जो असली नाम है वह तो चौथे पद में है ।

नाम रहे चौथे पद माहीं ।
यह ढूढें त्रिलोक माहीं ।।

कबीर ने उसे सार शब्द कहा है। तुम्हारी अपनी वासनाओं के अनुसार जीवन बनता है। वासना ही इस सनातन धर्म के नियम के अनुसार सृष्टि की रचना करती है। वासना ही को बदल देने से तुम निवृति मार्ग में जाकर अपने निजि स्वरूप में जा सकते हो यह जितना खेल है यह सब तुम्हरी अपनी माया का है। चूँकि मन तुम्हारा चंचल है, इसको समझ नहीं आती। अज्ञान होने के कारण भटकता फिरता है। अतः सत्संग की आवश्यकता हैं।

माया तो ठगिनी भई, ठगत फिरे सब देश।
जा ठग ने ठगिनी ठगी, ता ठग के आदेश॥

वह ठग कौन है ? वह सन्त, जिसने माया को ठग लिया। किस माया को ठगा ? एक तो स्थूल माया और एक अपने मन की। जो इसके अन्तर में तरगें उठतीं हैं, कभी सहसदक्रंवल, कभी त्रिक्षयी, कभी शून्य, महाशून्य, कभी भँवरगुफा वह काल और माया का ही तो जाल है। सन्त सतपद में रहता है। वह त्रिकुटी आदि में अभ्यास नहीं करता, क्योंकि उसने उसके रूप को समझ लिया है। माया उसके वश में है। ऐसे पुरुष की संगत से तुम्हें शान्ति मिलेगी। मेरी संगत करने वालों को यदि शान्ति नहीं मिलती तो मैं समझता हूं कि मेरे जीवन को धिक्कार है। सत्संगियों में कितने ही आदमी दुनियाँ के व्यवहार के लिये रहते हैं, कोई डाक्टरी के लिये, कोई वकालत के लिये आदि। कोई लंगर में रोटी मुफ्त खाने जाता है। यह सत्संग नहीं है। सत्संग— सत का संग और वह उस समय जब कोई सन्त अपने रूप में हो। राधास्वामी मत की पुस्तकें पढ़ो। स्वामी जी भजन में बैठे। लोग सत्संग में आये, दर्शन किये, कृत्य—कृत्य हो गये। दया दृष्टि हो गई। उस समय का जो

सत्संग है वह लाभदायक है। यह सत्संग बुद्धि का सत्संगहै। तुम्हारे संशयों को निवारण करने तथा भ्रमों को दूर करने को सत्संग है। सत्संग है सत का संग। एक तो बाहर सत्संग और एक अन्तरीय।

गुरु जो बसें बनारसी, शिष्य समुन्दर तीर।
एक पलक बिछड़े नहीं, जो गुन होय शरीर॥

जिस समय कोई गुरु अभ्यास में बैठा हुआ हो और कोई उसका शिष्य उसके पास अभ्यास में बैठे तो रेडियेशन के नियम के अनुसार यदि गुरु शान्त है तो वह भी शान्त हो जायगा। केवल गुरु का ही सम्बन्ध नहीं किन्तु जितने महापुरुष सत्संग में बैठते हैं उन सबकी रेडिरेशन है। यह सबको रेडियेशन एक दूसरे पर पड़तो। इसलिये सबसे वढ़कर तरीका यह है कि कहीं मत जाओ। अपने घर बैठो। विशेष-विशेष श्रेणियों के स्थान (Stages) पर तुम ध्यान करने बैठ जाओ, उस समय ब्रह्माण्ड में जितने जितने दूसरे आदमी ध्यान कर रहे हैं सबकी रेडियेशन का सम्बन्ध तुम्हारे मन (mind) के साथ हो जायगा और तुमको शान्ति मिल जायगी। यह टेलीविजन (television) का नियम है तथा रेडियेशन का नियम है। इसलिये सत्संग की महिमा हैं। यही पातंजलि के योग शास्त्र में हैं कि शान्ति या मोक्ष प्राप्त करने के लिये यह करो वह करो। यदि कुछ नहीं बनता तो किसी वीतराग पुरुष को अपनी खोपड़ी में रक्खो। मेरा ध्यान करने वाले किसी व्यक्ति अन्तर में यदि मूर्ति बन जाती है और मैंनको शान्ति नहीं मिलती, उसकी मनोकामनायें पूर्ण नहीं होतीं तो मेरा दोष नहीं है। साथ ही तुम्हारा विश्वास और श्रद्धा भी है। जैसे तुम देखो एक स्त्री है, बड़ी

(शेष पृष्ठ ३६ का)

सुन्दर है। एक आदमी उसको माँ समझता है जब उसका भाई ध्यान करेगा तो बहिन का भाव आयेगा। उसका पति ध्यान करेगा उसके अन्तर और भाव आयेगा। इस प्रकार सबसे बड़ा बड़प्पन तुम्हारा अपना है अथवा तुम्हारे अपने ही मन का है। जिस व्यक्ति ने या जिस ठग ने माया को ठग लिया है उसकी सँगत से उसके ध्यान से तुमको लाभ पहुँचेगा।

धार्मिक ग्रन्थों से भी लाभ पहुंचता है। मनुष्य की रेडियेशन उसके विचार में आ जाती है, पत्रों में आ जाती है, वातावरण में परिवर्तन हो जाता है। किसी शुद्ध चित्त वाले पुरुष का कोई विचार मन से निकलता हुआ ब्रह्माण्ड में फैल जाता है और लोग उसके प्रभाव में आ जाते हैं जितनी कि उसके मन की शुद्धताई है। यदि बुरा करो तो बुरे का भी ख्याल फैलेगा। तुम देखो एक स्त्री घर में लड़ाकी है, झगड़ा करती रहती है, वह कुछ कहे या न कहे, जब उसका पति घर में आयेगा, मुँह उसका होगा दूसरी ओर, पीठ देखेगा। वह डर जायेगा। यदि तुम अपने घरों में अपने मन को शुद्ध रखकर प्रेम मय रहते हो तो तुम्हारे रेडियेशन से तुम्हारा सारा परिवार स्वर्ग बन सकता है। खाँड खाने वालों को खांड मिलती है, शराबी को शराबी मिल जाते हैं। ज्वारी को ज्वारी मिल जाते हैं। भक्तों को भक्त मिल जाते हैं। ज्ञानियों को ज्ञानी मिल जाते हैं। कामियों को कामी मिल जाते हैं। क्यों मिल जाते हैं? यह है रेडियेशन का नियम। विचार शक्ति का नियम (Magnetism of thougtht) काम करता है। यह विचार की शक्ति है। यह संसार संकल्प मय है, माया मय है। वासना रूपी जगत है। यही सनातन धर्म की शिक्षा है।

जै सनातन धर्म की। क्यों ? क्योंकि यह कुदरती (प्रकृतिक धर्म है। यह मानव जाति का धर्म है। किसी एक सम्प्रदाय का धर्म नहीं है। इसलिये मैंने हिन्दू धर्म के शब्द को बदल कर मानव धर्म रखा क्योंकि यह शब्द सीमित हो गये। पूरे भाव का अर्थ नहीं देते हैं। तो माया हमारी वासना है। मैंने दुनियाँ में रहने का भी कुछ ढंग आपको बताया। कोई कमी नही छोड़ी जितनी कि मेरे में बुद्धि थी। यद्यपि मुझे व्याख्यान देने का ढंग नहीं आता मगर जैसी भी वर्णन शैली मुझे मिल सकी, मैंने साधारण शब्दों में अपने विचार प्रगट कर दिये ताकि मेरे भाव को आप लोग अच्छी तरह समझ सको।

वाणी का यही अर्थ है कि एक मैं मन का भाव दूसरे में चला जाय। सत्संग से बाणी की आवश्यकता नहीं पड़ती। गुरु का शिष्य होने में आवश्यक नहीं कि तुम किसी पुरुष को गुरु मानो, तुम उसे पिता मानो, भाई मानो, सखा मान लो। मित्र मान लो। हिन्दू जातियों में गोपियों की और भक्ति थीं, गोपों की और, ऊधो की और अर्जुन की और। अभिप्राय तो दो हृदयों में सच्चे प्रेम का भाव उत्पन्न करना है। जब दो हृदय मिल जाते हैं एक दूसरे के भाव को समझ जाता है चाहे वह अपने मुंह से उसे शब्दों द्वारा प्रगट कर सके या न कर सके। मां और बच्चे का प्रेम होता है। बच्चा बोल नहीं सकता, समझ नहीं सकता मगर माँ के इशारे को बच्चा समझता है और बच्चों के इशारों को मां समझती है। स्वामी जी ने लिखा है कि तोतली बात को माँ समझती है। इसी तरह दो व्यक्तियों में परस्पर प्रेम होना चाहिये। यदि वह प्रेम निष्काम हैं, केवल प्रेम की दृष्टि से है तो क्या कहना! स्वयं एक ही भाव दूसरे भाव में पड जाता है। इसको कहते हैं [illegible]

काबू करना महा कठिन है। यह महा चंचल है। इसका पहिला इलाज है सत्सग। सत्संग दो प्रकार का है। एक तो वह जो मैं दे रहा हूँ वर्णात्मक। वर्णात्मक सत्संग से बुद्धि निश्चल होती है भ्रम जाते हैं, शंकायें निवारण हो जाती है। एक सत्संग होता है आत्मिक।

दर्श पर्श अरु मज्जन पाना।

एक की रेडियेशन दूसरे के अन्दर जाती है। वह प्रभाव करती है। चाहे वह उसको प्रगट कर सके या न कर सके। तुम किसी हमदर्द दिल को देखो। वह कुछ नहीं करता। वह दुखी को देखकर प्रेम की दृष्टि से देखता है, दूसरे को शान्ति मिल जाती है। यह है सत्संग की महिमा।

सब को शान्ति

× — ×

धन्यवाद

श्री अमरचन्द भाटिया अमृतसर (पँजाब) एवं श्री माधव राव लाइनमैन निजामाबाद उ०प्र० ने पत्रिका की सहायतार्थ ५०) भेजे हैं। पत्रिका इसके लिये उनका आभार प्रकट करती है। एवं उनके आर्थिक वृद्धि एवं लम्बी आयु की कामना करती है।

—प्रकाशक—

सूचना :—

जिन भाईयों ने पत्रिका का वार्षिक शुल्क अभी तक नहीं भेजी है, वह कृपा करके जल्दी से जल्दी भेजने का

मायाजाल

जगत में कैसी लूट पड़ी ॥टेक॥

माता कहे पूत है मेरा, भाई भाई बनावे।
घर की तिरिया तन से लिपटी, पति कह रार मचावे॥
बहन बीर कह हँस मुसकावे, मुस के धन ले जावे।
पुत्रबधू कहे ससुर सियाना, झूठे भाव दिखावे॥
राजा कहे मेरी है परजा, करे कमाई उद्यम।
मक्खन काढ़ मुझे दे उत्तम, पिये छाछ नित मध्यम॥
पण्डित दान दक्षिणा माँगे, साधू भिक्षा धारो।
तीरथ मठ मूरति और मन्दिर, लूटें लूट की बारी॥
मरते समय आग यह बोली, इसे जला खा जाऊँ।
मिट्टी कहे गाढ़ दे मुझमें, अपना अंश बनाऊँ॥
हवा सुखावे पानी घुलावे, सिमटावे आकासा।
चकित हुआ यह देख के लोला, लूट का अजब तमासा॥
मैं हूँ कौन कौन है मेरा, इसकी समझ न आई।
देख लूट का जग विस्तारा, लूट हुई दुखदाई॥
कभी कभी भूल भरम में फँसकर, आप लुटूँ लुटवाऊँ।
लूट लूट के लुट गया सारा, लूट का मर्म न पाऊँ॥
राधास्वामी की संगत पाई, समझ लूट की आई।
व्याकुल चित चरनों में आया, ली सतगुरु शरनाई।

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जाँय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य १०—०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अङ्क निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ साफ लिखना चाहिये। और पते की तब्दीली भी।

प्रकाशक